

समकालीन भारत के संदर्भ में पंडित दीनदयाल उपाध्याय की शैक्षिक अवधारणा की एक परीक्षा

Chandana Banerjee^{1*}, Dr. Mamta Rani²

¹ Research Scholar, Kalinga University

² Professor, Hindi Department, Kalinga University

सार - इस अध्ययन का उद्देश्य समकालीन भारत के संदर्भ में एक प्रमुख भारतीय दार्शनिक और राजनीतिक विचारक पंडित दीनदयाल उपाध्याय द्वारा प्रस्तुत शैक्षिक अवधारणाओं की जांच करना है। शिक्षा पर उपाध्याय के विचारों, जैसा कि उनके कार्यों जैसे ष्णुकात्म मानववाद में रेखांकित किया गया है, का भारत के शैक्षिक प्रवचन पर गहरा प्रभाव पड़ा है। उपाध्याय के दर्शन और शिक्षा के बारे में उनकी दृष्टि का एक अवलोकन प्रदान करके अनुसंधान शुरू होता है, जो व्यक्तियों के समग्र विकास को बढ़ावा देने के साधन के रूप में उनके शारीरिक, बौद्धिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक पहलुओं को शामिल करता है। यह प्राचीन ज्ञान और वैज्ञानिक प्रगति के बीच संतुलन की वकालत करते हुए आधुनिक शिक्षा के साथ पारंपरिक भारतीय मूल्यों के एकीकरण पर उनके जोर की पड़ताल करता है। यह अध्ययन आज के भारत में उपाध्याय की शैक्षिक अवधारणाओं की प्रासंगिकता और प्रयोज्यता की जांच करता है। यह गुणवत्ता, पहुंच और इक्विटी के मुद्दों सहित भारतीय शिक्षा प्रणाली के सामने आने वाली चुनौतियों की जांच करता है। शोध विश्लेषण करता है कि कैसे उपाध्याय के विचार इन चुनौतियों का समाधान कर सकते हैं और एक अधिक समावेशी और व्यापक शिक्षा प्रणाली के विकास में योगदान कर सकते हैं।

कीवर्ड - समकालीन भारत, पंडित दीनदयाल उपाध्याय, शैक्षिक अवधारणाएँ परीक्षा

-----X-----

1. परिचय

एक प्रमुख भारतीय दार्शनिक, राजनीतिक विचारक और भारतीय जनसंघ के संस्थापक सदस्यों में से एक पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने अपने लेखन और भाषणों के माध्यम से शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया। एकात्म मानववाद के दर्शन में निहित उनकी शैक्षिक अवधारणाओं का भारत में शैक्षिक प्रवचन पर स्थायी प्रभाव पड़ा है। इस अध्ययन का उद्देश्य समकालीन भारत के संदर्भ में उपाध्याय की शैक्षिक अवधारणाओं की प्रासंगिकता और प्रयोज्यता की जांच करना है। उपाध्याय की शिक्षा की दृष्टि में शारीरिक, बौद्धिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक पहलुओं के एकीकरण पर जोर देते हुए व्यक्तियों के समग्र विकास को शामिल किया गया है। उनका मानना था कि शिक्षा को केवल ज्ञान प्राप्त करने से परे जाना चाहिए और समाज में योगदान करने में सक्षम पूर्ण व्यक्तियों के पोषण पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। उनके विचारों ने एक

संतुलित दृष्टिकोण की वकालत की जो पारंपरिक भारतीय मूल्यों को आधुनिक शिक्षा के साथ जोड़ता है, प्राचीन ज्ञान और वैज्ञानिक प्रगति के बीच सामंजस्य स्थापित करता है। (नारायण, नरसिंह। 2017)

समकालीन भारत को अपनी शिक्षा प्रणाली में कई चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। गुणवत्ता, पहुंच और समानता के मुद्दे बने रहते हैं, जो लाखों छात्रों के विकास और अवसरों में बाधक हैं। इन चुनौतियों का समाधान करने और अधिक समावेशी और व्यापक सीखने का अनुभव प्रदान करने के लिए शिक्षा प्रणाली में सुधार की आवश्यकता की बढ़ती मान्यता है। इस अध्ययन का उद्देश्य यह पता लगाना है कि उपाध्याय की शैक्षिक अवधारणाएँ समकालीन भारत के संदर्भ में इन चुनौतियों का समाधान करने में कैसे योगदान दे सकती हैं। मौजूदा साहित्य और अनुभवजन्य अध्ययनों के साथ-साथ शिक्षा पर उनके लेखन और भाषणों का विश्लेषण करके,

अध्ययन का उद्देश्य उनके विचारों के व्यावहारिक कार्यान्वयन और भारतीय शिक्षा प्रणाली पर उनके संभावित प्रभाव पर प्रकाश डालना है। शोध पाठ्यचर्या डिजाइन, शिक्षाशास्त्र और मूल्यांकन विधियों पर उपाध्याय की शैक्षिक अवधारणाओं को शामिल करने के निहितार्थों की भी पड़ताल करेगा। यह जाँच करेगा कि कैसे उनके विचार शैक्षिक परिदृश्य को आकार दे सकते हैं और नीतिगत निर्णयों को सूचित कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त, अध्ययन उपाध्याय की दृष्टि को प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए शिक्षकों को आवश्यक कौशल और ज्ञान से लैस करने के महत्व की जाँच करेगा।

एक व्यापक समझ प्रदान करने के लिए, अनुसंधान मिश्रित-पद्धतियों के दृष्टिकोण को नियोजित करेगा। इसमें शिक्षा पर उपाध्याय के लेखन और भाषणों की गहन समीक्षा के साथ-साथ प्रासंगिक साहित्य और अनुभवजन्य अध्ययनों का विश्लेषण शामिल होगा। विभिन्न दृष्टिकोणों और अंतर्दृष्टि को इकट्ठा करने के लिए शिक्षकों, नीति निर्माताओं और अन्य हितधारकों के साथ साक्षात्कार और सर्वेक्षण भी आयोजित किए जाएंगे। इस अध्ययन के निष्कर्षों का उद्देश्य उपाध्याय के शैक्षिक दर्शन और समकालीन भारत में इसकी प्रासंगिकता को समझने में योगदान देना है। अनुसंधान नीति निर्माताओं, शैक्षिक संस्थानों और उपाध्याय की अवधारणाओं को शैक्षिक नीतियों और प्रथाओं में शामिल करने में रुचि रखने वाले चिकित्सकों के लिए व्यावहारिक सिफारिशें पेश करने का इरादा रखता है, जो अंततः भारत में एक अधिक समावेशी, समग्र और सांस्कृतिक रूप से निहित शिक्षा प्रणाली की दिशा में प्रयास कर रहे हैं। पंडित दीनदयाल उपाध्याय की शैक्षिक अवधारणाओं की यह परीक्षा भारतीय शिक्षा प्रणाली के सामने आने वाली चुनौतियों का समाधान करने और समकालीन भारत में शिक्षा के भविष्य को आकार देने के लिए उनकी क्षमता का पता लगाने का प्रयास करती है। (निगम, आर.एल. 2016)

2. पंडित दीनदयाल उपाध्याय की रचनाये

पंडित दीनदयाल उपाध्याय एक पत्रकार के रूप में अपने करियर के लिए भी जाने जाते हैं। सन् 1940 में जब वे लखनऊ की मासिक पत्रिका राष्ट्र धर्म में कार्यरत थे, तब उनके अंदर पत्रकारिता की भावना का उदय होने लगा। राष्ट्र धर्म भारत में प्रकाशित हुआ था। वह आर.एस.एस. कार्यालय में अपने समय के दौरान, वह दो अलग-अलग समाचार पत्रों के संपादक भी थे: साप्ताहिक पचजन्य और दैनिक स्वदेश। चंद्रगुप्त मौर्य और शंकराचार्य की जीवनी दोनों नाटक उनके

द्वारा भारतीय भाषा हिंदी में लिखे गए थे। इसमें बी. हेडगेवार की जीवनी भी शामिल है, जिन्हें राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की स्थापना का श्रेय दिया जाता है। उनकी जीवन गाथा अब मराठी और हिंदी दोनों अनुवादों में उपलब्ध है। सम्राट चंद्रगुप्त, क्यों अखंड भारत, और जगतगुरु शंकराचार्य साहित्य के उनके सबसे प्रसिद्ध कार्यों में से कुछ हैं। राष्ट्रीय जीवन के मुद्दे, राष्ट्रीय विचार और राष्ट्रीय जीवन की दिशा, एकात्मक मानवतावाद, एक प्रेम कथा, लोकमान्य तिलक और अन्य संबंधित विषय। (नक्रमा, क्वाने। 2015)

i. एकात्म मानववाद

इस पुस्तक में, पंडित दीनदयाल उपाध्याय का एकात्म मानववाद का दर्शन, जो व्यक्तिवाद के अतिरिक्त, समाजवाद पर जोर देता है और लोगों को अपने लिए सोचने की स्वतंत्रता प्रदान करता है, उसका प्राथमिक सांस्कृतिक लक्ष्य राष्ट्रवाद है।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय जी का लक्ष्य था कि हमारे देश में राष्ट्रवाद की भावना सदैव जागृत रहे। साथ में, मानवतावाद एक वर्गहीन जातिविहीन और संघर्ष मुक्त सामाजिक व्यवस्था को साम्यवाद से अलग रखता है। यह अपने स्वरूप को परिभाषित करता है। यह भारतीय संस्कृति को सामाजिक-आर्थिक और राजनीतिक तरीके से एकीकृत करता है।

ii. विचारधारा

इस पुस्तक में, पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने अपनी कल्पना में राजनीतिक दर्शन और मानवतावाद की कल्पना की थी। उन्होंने प्रत्येक व्यक्ति के मन, बुद्धि और आत्मा के समवर्ती और एकीकृत कार्यक्रम पर जोर दिया है। पंडित दीनदयाल उपाध्याय का मत था कि भारत जैसा स्वतंत्र देश व्यक्तिगत आदर्शों या लोकतंत्र, समाजवाद, साम्यवाद या पूंजीवाद जैसी पश्चिमी अवधारणाओं पर भरोसा नहीं कर सकता। वह काफी सोच-विचार के बाद इस नतीजे पर पहुंचे हैं। उनका मानना था। यह स्वदेशी भारतीय विचार एक पश्चिमी ढांचे के अंदर सन्निहित है।

वे नई तकनीकों को अपनाने के लिए खुले थे, जिस तरह से उन्होंने फिट देखा। उनका स्वराज्य में दृढ़ विश्वास था, जो मानता है कि भारत के गुणों के अनुरूप कुछ भी संशोधित किया जाना चाहिए।

iii. राजनीति

1937 में, जब पंडित दीनदयाल उपाध्याय कानपुर के सनातन धर्म महाविद्यालय में छात्र थे, तब उनका परिचय राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सदस्यों से हुआ। पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने 1942 में एक पूर्णकालिक कर्मचारी के रूप में आरएसएस के साथ अपना करियर शुरू किया। उपाध्याय ने अंततः आरएसएस के आजीवन अनुयायी बनने का फैसला किया। 1955 में उत्तर प्रदेश के संयुक्त प्रधान प्रचारक के पद पर पदोन्नत होने से पहले, उन्होंने लखीमपुर जिले के प्रचारक के रूप में काम किया।

इस तथ्य के कारण कि उनके बयान संघ के वर्तमान रवैये को दर्शाते हैं, उन्हें आदर्श आरएसएस स्वयंसेवक माना जाता था। 1940 के दशक में उन्होंने मासिक प्रकाशन के रूप में लखनऊ स्थित प्रकाशन राष्ट्र धर्म की स्थापना की। प्रकाशन का प्राथमिक लक्ष्य हिंदुत्व राष्ट्रवाद के दार्शनिक आधारों को लोकप्रिय बनाना था। उन्होंने साप्ताहिक पंच जया के अलावा दैनिक स्वदेश का प्रकाशन शुरू किया। 1951 में, जब श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने भारतीय जनता संघ की स्थापना की, दीनदयाल को आरएसएस द्वारा नवगठित संगठन का नेतृत्व करने के लिए नियुक्त किया गया था।

iv. राष्ट्र जीवन की समस्या:

इस पुस्तक में, पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने स्वतंत्रता के बाद के युग में गरीबी, अशिक्षा और भ्रष्टाचार सहित भारत के सामने आने वाली चुनौतियों पर चर्चा की है। वे एकात्म मानववाद के सिद्धांतों पर आधारित समाधान सुझाते हैं।

v. कांग्रेस का एकमात्र विकल्प:

यह पुस्तक 1960 के दशक में लिखी गई थी जब कांग्रेस पार्टी भारत में प्रमुख राजनीतिक शक्ति थी। इस पुस्तक में पंडित दीनदयाल उपाध्याय ने भारतीय जनसंघ को कांग्रेस पार्टी के एकमात्र विकल्प के रूप में प्रस्तावित किया है। (पामर, नॉर्मन डी. 2017)

3. पंडित दीनदयाल उपाध्याय का करियर

1937 में, सनातन धर्म कॉलेज में भाग लेने के दौरान, उपाध्याय एक साथी छात्र बालूजी महाशब्दे से परिचित हुए, जिन्होंने बाद में उन्हें आरएसएस से मिलवाया। आरएसएस के संस्थापक, के.बी. हेडगेवार, एक शाखा में उनसे मिले, और उन दोनों ने गहन चर्चा की। जब वे कानपुर में थे, तब

उन्होंने उसी स्कूल में पढ़ाई की, जिसमें सुंदर सिंह भंडारी थे। 1942 से शुरू होकर, उन्होंने अपने जीवन के हर पहलू को आरएसएस को समर्पित कर दिया। उन्होंने भारत के नागपुर में आरएसएस शिविर का दौरा करने के लिए गर्मी की छुट्टी के सभी 40 दिनों का लाभ उठाया, जहां उन्हें संघ के अनुष्ठानों और रीति-रिवाजों में निर्देश दिया गया था। आरएसएस के एजुकेशन विंग में अपनी शिक्षा के दूसरे वर्ष को पूरा करने के बाद, उपाध्याय को आजीवन प्रचारक के पद पर पदोन्नत किया गया। 1955 में, उन्हें उत्तर प्रदेश राज्य के संयुक्त प्रांत प्रचारक के पद पर पदोन्नत किया गया था, जो पहले लखीमपुर जिले के प्रचारक के पद पर थे। इस तथ्य के परिणामस्वरूप कि "उनका प्रवचन संघ के शुद्ध विचार-प्रवाह से मेल खाता था," उन्हें एक अनुकरणीय आरएसएस स्वयंसेवक के रूप में माना जाता था और उन्हें बहुत सम्मान दिया जाता था।

1940 के दशक में लखनऊ में रहने वाले उपाध्याय ने हिंदुत्व अवधारणा का प्रचार करने के लिए मासिक राष्ट्र धर्म समाचार पत्र के प्रकाशन की शुरुआत की। तत्पश्चात् उन्होंने दैनिक स्वदेश और साप्ताहिक पाञ्चजन्य करने की प्रथा भी प्रारम्भ की। 1951 में श्यामा प्रसाद मुखर्जी द्वारा भारतीय जनता पार्टी की स्थापना के बाद, दीनदयाल को आरएसएस द्वारा संघ परिवार के एक भरोसेमंद सदस्य के रूप में संगठन को बदलने में सहायता करने के लिए भेजा गया था। उसके बाद, उन्हें पूरे भारत के महासचिव के पद पर पदोन्नत किया गया। उनका पहला पद उत्तर प्रदेश राज्य में था। उन्होंने संगठन के लिए महासचिव की भूमिका में 15 साल बिताए। इसके अलावा, 1963 में, उन्होंने जौनपुर, उत्तर प्रदेश की लोकसभा सीट के लिए उपचुनाव में भाग लिया, जहां उनके पूर्ववर्ती दिवंगत जनसंघ सांसद ब्रम्ह जीत सिंह ऐसा करने में विफल रहे थे। (राजू, ए.एस. राम 2017)

1967 में हुए विधायी चुनावों में, जनसंघ को 35 सीटें मिलीं, जिससे वह लोकसभा में तीसरी सबसे बड़ी पार्टी बन गई। बाद में, जनसंघ संयुक्त विधायक दल का सदस्य बन गया, जो गैर-कांग्रेसी विपक्षी समूहों का एक प्रायोगिक गठबंधन था जिसने कई अलग-अलग राज्यों में सरकारें स्थापित कीं। इसने एक ही झंडे के नीचे भारत के स्पेक्ट्रम के दाएं और बाएं पक्षों पर राजनीतिक चरमपंथियों को एक साथ ला दिया। दिसंबर 1967 में कालीकट में हुए पार्टी अधिवेशन में उन्हें जनसंघ का अध्यक्ष चुना गया। उस दिन, अपने अध्यक्षीय भाषण में, उन्होंने गठबंधन सरकार के गठन और भाषा के उपयुक्त

उपयोग सहित कई विषयों पर चर्चा की। पार्टी की उनकी संक्षिप्त अध्यक्षता के दौरान, जो केवल दो महीनों के बाद फरवरी 1968 में समाप्त हो गया, संगठन के अंदर कोई महत्वपूर्ण परिवर्तन नहीं हुआ।

उपाध्याय साप्ताहिक पांचजन्य और दैनिक स्वदेश के संपादक थे, जो दोनों लखनऊ में स्थित थे। नाटक और जीवनी दोनों ही हिन्दी में लिखे गए। नाटक चंद्रगुप्त मौर्य के बारे में था, जबकि जीवनी शंकराचार्य के बारे में थी। उन्होंने हेडगेवार की एक जीवनी का अनुवाद किया जो मूल रूप से मराठी में लिखी गई थी। पंडित दीनदयाल उपाध्याय एक भारतीय राजनेता और बुद्धिजीवी थे जो 1940 से 1960 के दशक तक भारत के राजनीतिक और सामाजिक क्षेत्रों में सक्रिय रहे। उनका जन्म 25 सितंबर, 1916 को उत्तर प्रदेश के मथुरा में नगला चंद्रभान गाँव में हुआ था। (वाजपेयी, पुरुषोत्तम चंद 2015)

4. विरासत

पंडित दीनदयाल उपाध्याय की विरासत महत्वपूर्ण है और भारत और उसके बाहर भी लोगों को प्रेरित करती रहती है। वह एक दार्शनिक, सामाजिक और राजनीतिक नेता और बुद्धिजीवी थे जिन्होंने अपना जीवन राष्ट्र की सेवा के लिए समर्पित कर दिया। उनके प्रमुख योगदानों में से एक "एकात्म मानववाद" के दर्शन का सूत्रीकरण था, जो व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक जिम्मेदारी के बीच संतुलन की वकालत करता है। इस दर्शन ने भारत में राजनेताओं और विचारकों की पीढ़ियों को प्रेरित किया है और देश में नीतिगत निर्णयों को प्रभावित करना जारी रखा है।

उपाध्याय भारत में सबसे बड़े और सबसे प्रभावशाली सामाजिक-सांस्कृतिक संगठनों में से एक, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) के विकास और विस्तार में भी सहायक थे। आरएसएस के महासचिव के रूप में, उन्होंने संगठन को मजबूत करने और देश भर में अपनी पहुंच बढ़ाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

वह "अंत्योदय" की अवधारणा में दृढ़ विश्वास रखते थे, जिसका अर्थ है समाज में अंतिम व्यक्ति का उत्थान। उन्होंने समाज के वंचित और हाशिए पर रहने वाले वर्गों के सशक्तिकरण की वकालत की और सहयोग, आत्मनिर्भरता और सेवा के सिद्धांतों के आधार पर समाज की उनकी दृष्टि लोगों को प्रेरित करती रही। (वाष्णीय, आर.एल. 2018)

उपाध्याय की विरासत उन विभिन्न संस्थानों और संगठनों में भी स्पष्ट है जो उनके नाम पर हैं। दीनदयाल उपाध्याय अनुसंधान संस्थान, दीनदयाल उपाध्याय ग्राम ज्योति योजना, और पंडित दीनदयाल उपाध्याय राष्ट्रीय स्मारक कुछ ऐसे संस्थान हैं जिन्हें उनके सम्मान में स्थापित किया गया है। (बैसे, माया, 2007)

पंडित दीनदयाल उपाध्याय की विरासत भारतीय राजनीतिक और सामाजिक इतिहास में महत्वपूर्ण है। वह भारतीय जनता पार्टी (बीजेपी) और राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) के विकास में एक दूरदर्शी और प्रभावशाली व्यक्ति थे। उन्होंने एकात्म मानववाद के विचार का समर्थन किया, जिसका उद्देश्य न्याय, स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व के सिद्धांतों के आधार पर एक न्यायसंगत और न्यायसंगत समाज बनाना था।

उपाध्याय के विचारों का भाजपा और उसकी नीतियों पर एक बड़ा प्रभाव रहा है, और एक आत्मनिर्भर और सांस्कृतिक रूप से जड़े भारत का उनका दृष्टिकोण आज भी पार्टी को प्रेरित करता है। राजनीति में मूल्यों, नैतिकता और संस्कृति के महत्व पर उनके जोर का भारतीय राजनीतिक परिदृश्य पर स्थायी प्रभाव पड़ा है।

अपनी राजनीतिक विरासत के अलावा, पंडित दीनदयाल उपाध्याय एक प्रसिद्ध बुद्धिजीवी और एक महान वक्ता भी थे। उन्होंने राजनीति, अर्थशास्त्र और सामाजिक मुद्दों पर कई पुस्तकें और लेख लिखे, और उनके कार्यों को व्यापक रूप से पढ़ा और अध्ययन किया जाता है।

भारतीय राजनीति और समाज में उनके योगदान की मान्यता में, भारत सरकार ने उनके नाम पर कई संस्थान और पुरस्कार स्थापित किए हैं, जिनमें दीनदयाल उपाध्याय राष्ट्रीय शारीरिक रूप से विकलांग संस्थान और दीनदयाल उपाध्याय ग्रामीण कौशल योजना शामिल हैं। (शशि प्रभा श्री अरबिंदो 2018)

5. उपाध्याय जी की राजनीतिक, सनातन विचार धाराओं से संबंधित पक्ष

उपाध्याय जी की राजनीतिक विचार

पंडित दीनदयाल उपाध्याय एक दूरदर्शी राजनेता थे जो समाज और राष्ट्र के सर्वांगीण विकास में विश्वास रखते थे। उन्होंने "एकात्म मानववाद" के दर्शन की वकालत की जिसका उद्देश्य व्यक्तिगत स्वतंत्रता और सामाजिक

जिम्मेदारी के बीच संतुलन हासिल करना था। इस दर्शन ने एक विकेन्द्रीकृत अर्थव्यवस्था की आवश्यकता पर जोर दिया, जो आत्मनिर्भरता के सिद्धांत पर आधारित है, और एक विकेन्द्रीकृत राजनीतिक व्यवस्था, सहायकता के सिद्धांत पर आधारित है।

उपाध्याय “अंत्योदय” या समाज में अंतिम व्यक्ति के उत्थान के विचार के कट्टर समर्थक भी थे। उनका मानना था कि प्रगति का सही पैमाना सिर्फ आर्थिक विकास नहीं है बल्कि समाज के सबसे कमजोर और सबसे कमजोर वर्गों की भलाई है। उन्होंने एक कल्याणकारी राज्य की आवश्यकता पर जोर दिया जो सभी के लिए सामाजिक और आर्थिक न्याय सुनिश्चित करे।

उपाध्याय भारतीय जनसंघ के संस्थापक सदस्यों में से एक थे, जो बाद में भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) बन गई। उन्होंने पार्टी की विचारधारा को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जो राष्ट्रवाद, लोकतंत्र और सांस्कृतिक विरासत के सिद्धांतों पर आधारित थी। उनका मानना था कि भारत की सांस्कृतिक विरासत इसकी सबसे बड़ी ताकत है और राष्ट्र को आधुनिक, प्रगतिशील समाज के निर्माण के लिए अपने प्राचीन ज्ञान से प्रेरणा लेनी चाहिए। (वर्मा, रामकुमार. 2018)

उपाध्याय जी के सनातन विचार धाराओं से संबंधित पक्ष

सनातन धर्म (देवनागरी: सनातन धर्म, जिसका अर्थ है “शाश्वत धर्म”, “शाश्वत आदेश”) हिंदुओं द्वारा हिंदू धर्म को संदर्भित करने के लिए इस्तेमाल किया जाने वाला एक उपनाम है। यह हिंदू धर्म के “शाश्वत” सत्य और शिक्षाओं को संदर्भित करता है। इसका अनुवाद “जीने का प्राकृतिक और शाश्वत तरीका” के रूप में भी किया जा सकता है। यह शब्द भारतीय भाषाओं में हिंदू धर्म के लिए अधिक सामान्य हिंदू धर्म के साथ प्रयोग किया जाता है। सनातन धर्म ‘शाश्वत’ या पूर्ण कर्तव्यों और प्रथाओं की सूची को भी निरूपित कर सकता है।

उपाध्यायजी के सनातन विचार सनातन धर्म की अवधारणा से संबंधित हैं, जो सनातन सिद्धांतों और मूल्यों को संदर्भित करता है जो हिंदू धर्म का आधार बनाते हैं। उपाध्यायजी के सनातन विचारों से जुड़े कुछ प्रमुख पहलुओं में शामिल हैं:

i. स्वदेशी

उपाध्यायजी ने स्वदेशी की अवधारणा की वकालत की, जो आर्थिक मामलों में आत्मनिर्भरता और आत्मनिर्भरता के महत्व पर जोर देती है। उनका मानना था कि भारत को आयात पर निर्भर रहने के बजाय अपने स्वदेशी उद्योगों का विकास करना चाहिए और देश के आर्थिक विकास से समाज के सभी वर्गों को लाभ होना चाहिए। (पार्टिन बी हैरी। 2016)

ii. अंत्योदय

उपाध्यायजी की अंत्योदय की अवधारणा समाज के सबसे कमजोर वर्गों के उत्थान पर केंद्रित थी। उनका मानना था कि सभी नीतिगत फैसलों में समाज के सबसे गरीब और सबसे हाशिए पर पड़े वर्गों के कल्याण को प्राथमिकता दी जानी चाहिए और विकास का लाभ सबसे पहले उन्हीं तक पहुंचना चाहिए।

iii. धर्म

उपाध्यायजी के सनातन विचारों ने धर्म के महत्व पर जोर दिया, जो मानव व्यवहार को निर्देशित करने वाले नैतिक और नैतिक सिद्धांतों को संदर्भित करता है। उनका मानना था कि धर्म का पालन करने वाला समाज न्यायसंगत और न्यायसंगत होगा, और यह कि व्यक्तियों को इन सिद्धांतों के अनुसार अपना जीवन जीने का प्रयास करना चाहिए।

हिंदू धर्म में, धर्म व्यक्तिगत आचरण को नियंत्रित करने वाला धार्मिक और नैतिक कानून है और जीवन के चार सिरों में से एक है। उस धर्म के अलावा जो सभी पर लागू होता है (साधारण धर्म)- जिसमें सत्यवादिता, गैर-चोट, और उदारता शामिल है, अन्य सदगुणों के साथ- एक विशिष्ट धर्म (स्वधर्म) भी है जिसका किसी की कक्षा, स्थिति और स्थिति के अनुसार पालन किया जाना चाहिए। जिन्दगी में। धर्म धर्म-सूत्रों, धार्मिक नियमावतियों की विषय-वस्तु का गठन करता है, जो हिंदू कानून का प्रारंभिक स्रोत हैं, और समय के साथ-साथ कानून के लंबे संकलन, धर्म-शास्त्र में विस्तारित किया गया है।

iv. राष्ट्रवाद:

उपाध्यायजी का मानना था कि राष्ट्रवाद सनातन धर्म का एक महत्वपूर्ण पहलू है। उनका मानना था कि भारत की प्राचीन संस्कृति और परंपराओं ने एक मजबूत और जीवंत राष्ट्र की नींव प्रदान की है और सनातन धर्म के सिद्धांतों

का उपयोग आधुनिक और समृद्ध भारत के निर्माण के लिए किया जा सकता है। (वूडविल शैलॉट 2016)

6. सशक्त भारत की मांग

“सशक्त भारत की मांग” उपाध्याय जी द्वारा प्रयुक्त मुहावरा था। उन्होंने अपने कई पत्रों और विश्वास पत्रों में इस वाक्यांश का इस्तेमाल किया। उपाध्याय जी ने आजादी के बाद भारत में एक मजबूत अर्थव्यवस्था विकसित करने के लिए महत्वपूर्ण प्रयास किए। वे स्वदेशी आंदोलन के नेता थे और उन्होंने भारत की आत्मनिर्भरता स्थापित करने के लिए अथक परिश्रम किया।

उन्होंने “सशक्त भारत की मांग” को अपने आदर्शों का अभिन्न अंग बनाया। उन्होंने भारत की समृद्धि और आत्मनिर्भरता के लिए एक समृद्ध विकास योजना की आवश्यकता पर प्रकाश डाला। उपाध्याय जी ने भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास से जुड़े सुझावों और नीतियों पर भी अपने विचार व्यक्त किए।

उपाध्याय जी की मांग का उद्देश्य भारत को उसके वास्तविक स्वरूप से जोड़ना था। उन्होंने भारत की आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था के विकास की दिशा में काम किया। आज भारत एक मजबूत और आत्मनिर्भर देश है, जो उपाध्याय जी के मजबूत भारत के सपने को साकार कर रहा है। (वेणुगोपाल सी. एन. 2017)

“सशक्त भारत की मांग” उपाध्याय जी के द्वारा दी गई थी। उन्होंने इस वाक्य का उपयोग अपने जीवन के कई समर्थन पत्रों और विश्वास पत्रों में किया था। उन्होंने भारत की स्वतंत्रता के बाद सशक्त भारत की अर्थव्यवस्था विकसित करने के लिए काफी प्रयास किए थे। वे स्वदेशी आंदोलन के अग्रणी थे और भारत की आत्मनिर्भरता को स्थापित करने के लिए लगातार संघर्ष करते रहे।

उन्होंने सशक्त भारत की मांग को अपने आदर्शों का एक महत्वपूर्ण अंग बनाया था। उन्होंने भारत की समृद्धि और स्वावलंबन के लिए एक समृद्ध विकास योजना की आवश्यकता को उजागर किया था। वे भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास के लिए सुझाव और नीतियों के संबंध में भी विचारों को व्यक्त करते रहे।

7. राष्ट्र जीवन साक्षात्कार

यहां आधुनिक काल में स्वामी विवेकानन्द एवं महर्षि अरविन्द जैसे महापुरुषों ने साधु सन्तों की परम्परा में होने के बावजूद जनजाग्रति की दृष्टि से महत्वपूर्ण कार्य किये हैं उसी परम्परा में लोकमान्य तिलक व संघ के संस्थापक डा. हेडगेवार जी भी थे। उसी परम्परा के भारत माँ के उस सपूत और अनन्य प्रतिभा पुत्र ने राष्ट्र जीवन के भाग्य विधायन से सम्बन्धित - जो सूत्र दिए हैं वे उनके जीवन दर्शन के दर्पण हैं। विविधता में एकता के सूत्र को खोजकर उन्हें पुष्ट बनाकर समाज और राष्ट्र को संगठित करने वाला उनका जीवन हमारे समक्ष आदर्श प्रस्तुत करता है। भारतीय संस्कृति और जीवन दर्शन की आधुनिक युगानुरूप व्याख्या करते हुए उन्होंने सामाजिक एवं राजनैतिक क्षेत्र में अनुपम योगदान किया है।

पण्डित जी का मानना था कि “बिना शुद्ध राष्ट्रभाव के कोई भी राष्ट्र प्रगति नहीं कर सकता और तो और वह अपनी स्वतन्त्रता को भी सुरक्षित नहीं रख सकता। राष्ट्र के परम्परागत इतिहास से प्रकट होने वाले राष्ट्रीयत्व का ज्ञान धूमिल पड़ जाने के कारण ही हम तमाम आपत्तियों में फंस गये हैं।” हमें आजाद हुए इतने वर्ष ब्यतीत होने के बाद देश में चैतन्य का निर्माण क्यों नहीं हुआ? गरीबी, भुखमरी, बेरोजगारी, निराशा और लाचारी क्यों बढ़ती जा रही है? आर्थिक, राजनैतिक, सामाजिक, साहित्यिक सभी क्षेत्रों में गिरावट क्यों आती गयी? और राष्ट्रीय प्रवाह क्यों पतित हो रहा है? निःसन्देह इसका एक ही उत्तर है कि हम अपने पैरों पर नहीं खड़े हैं, जिन्होंने अपना आधार खो दिया उन्हें बहना ही पड़ेगा।

हमारा राष्ट्रजीवन अपना जड़मूल खो बैठा है - इस घटना को रोकने का केवल एक ही उपाय है कि राष्ट्र जीवन का सच्चा साक्षात्कार किया जाए। राष्ट्र के इस सच्चे साक्षात्कार के अभाव में ही हमारा वर्तमान में राष्ट्रीय पतन हुआ है। जातिवाद, साम्प्रदायवाद, भाषावाद, व क्षेत्रवाद आदि सब सामाजिक एकता के पथ में विषम बाधाएं हैं जो परस्पर घृणा और द्वेष भावों को जन्म देकर राष्ट्र को कमजोर करती है। अतः यदि राष्ट्र को समृद्ध सुखी स्थिर और दीर्घजीवी बनाना है तो इन बाधाओं को हटाना होगा। यह तभी सम्भव है जब हम राष्ट्र को परमेश्वर के रूप में देखें, उपास्य के रूप में देखें, एक व्यक्ति (पुरुष) के रूप में देखें। सहस्रो एवं कोटि-कोटि प्रजा का यह सम्मिलित रूप ही राष्ट्र है एक पुरुष है और सभी राष्ट्रवासी इस पुरुष के अंग हैं। इसी राष्ट्र पुरुष का वर्णन ‘ऋग्वेद’ के ‘पुरुषसूक्त’ में हुआ है। पं. दीनदयाल

जी उपाध्याय ने भी अपने चिन्तन में इसी राष्ट्रपुरुष की मूर्ति स्थापित की है। (विन और एम. कैलेवर्ट 2019)

“जिस राष्ट्र मन्दिर का निर्माण इतने दिनों से अनेक आत्मविज्ञानी ऋषि, मुनि, दिग्विजयी सम्राट, कवि, कलाकार, साहित्यकार, स्मृतिकार, पुराणों के रचयिता तथा धर्मशास्त्रों के प्रणेता करते चले आ रहे हैं, आज उस मन्दिर में राष्ट्र - पुरुष की मूर्ति स्थापित करके उसे अभिमंत्रित करना है। भगवान को धन्यवाद दें कि यह सौभाग्य हमको प्राप्त हुआ है। इस मन्दिर के प्रथम पुजारी बनें। ऐसा प्रबन्ध कर चलें कि पीछे आने वाली पीढ़ियां इस मन्दिर में अनन्त काल तक पूजा कर सकें।”

8. धर्म की प्रभु सत्ता पर विश्वास

पण्डित दीनदयाल जी को धर्म पर अटूट विश्वास था उन्होंने के शब्दों में - “यदि हमारा प्राण कहीं है तो वह धर्म में है धर्म गया कि प्राण गया।” लेकिन धर्म का जो उनका अर्थ था वह अत्यन्त उदार, अत्यन्त व्यापक, सर्वग्राही था। जबकि आजकल धर्म का बहुत ही ‘संकुचित’ अर्थ लगाया जाने लगा है। वह धर्म के प्रति संकुचित दृष्टिकोण के विरोधी थे। उनका कहना था-

“धर्म का सम्बन्ध केवल मन्दिर मस्जिद से नहीं है। उपासना पद्धति धर्म का एक अंग हो सकती है किन्तु धर्म तो व्यापक है। मन्दिर मस्जिद लोगों में धर्माचरण की शिक्षा का प्रभावी माध्यम भी रहे हैं। किन्तु जिस प्रकार विद्यालय विद्या नहीं हैं वैसे ही मन्दिर धर्म से भिन्न हैं। हो सकता है प्रतिदिन कोई व्यक्ति पाठशाला जाये फिर भी अनपढ़ रह जाये। उसी प्रकार प्रतिदिन मन्दिर या मस्जिद में जाने वाला व्यक्ति भी धर्म विहीन हो सकता है। मत मन्दिर मस्जिद में जाना मजहब, रिलीजन है। पण्डित दीनदयाल जी मत, मजहब रिलीजन सम्प्रदाय आदि को सागर में बूंदों की तरह धर्म में समाहित मानते थे। धर्म के प्रति उनका दृष्टिकोण विशुद्ध भारतीय और उदार था। क्योंकि हमारे प्राचीन भारतीय ऋषियों मुनियों ने धर्म के अत्यन्त व्यापक स्वरूप का प्रतिपादन किया है। (डाइटर ताइलिउ, एड। 2019)

महर्षि कणाद् उसे धर्म मानते हैं जिससे अभ्युदय (भौतिक उन्नति) तथा निश्रेयस् (आध्यात्मिक उन्नति) दोनों की सिद्धि हो “यतोऽभ्युदय निश्रेयस् सिद्धिर्धर्मः” महर्षि जेमिन ने विहित कर्मों के पालन तथा निषिद्ध कर्मों के त्याग को धर्म बताया। मनुस्मृति के रचयिता महाराज मनु ने धर्म को अत्यन्त व्यापक रूप से परिभाषित करते हुए कहा है कि “अपने देश के रागद्वेषहीन सदाचारी विद्वान्

जिसका अनुष्ठान करते हैं। और अपना हृदय भी जिसे स्वीकार करता हो उसे धर्म कहते हैं।

विद्वद्भिः सेवितः सदभिः नित्यम् अद्वेषरागिमः

हृदयेन यनु सानो धर्मस्तन्निबोधते।

“व्युत्पत्ति की दृष्टि से ‘धर्म’ शब्द संस्कृत की ‘धृ’ धातु से बना है जिसका अर्थ होता है धारण करना। इसलिए कहते हैं ‘धारणान्धर्ममित्याहुः’। जिसे धारण किया जाए वह धर्म है व्यक्ति और समाज धर्म के आधार पर टिके हुए हैं। धर्म का आविर्भाव मानव जाति में प्रेम शान्ति सद्भावना और अर्थव्यवस्था बनाए रखने के लिए ही हुआ है।”

विश्व धर्म संसद के प्रथम दिन अपने संक्षिप्त भाषण में स्वामी विवेकानन्द ने धर्म की जो परिभाषा दी शायद पण्डित जी भी उनकी उस परिभाषा से अक्षरसः सहमत थे। भारतीय संस्कृति के पुरोधा होने के नाते ही स्वामी जी उपाध्याय जी के लिए आदर्श। पूर्वजों में से एक थे।

“जिस स्नेह और सौहार्द के साथ आपने हम लोगों का स्वागत किया है उसके फलस्वरूप मेरा हृदय अकथनीय हर्ष से प्रफुल्लित हो रहा है। मुझे ऐसे धर्मावलम्बी होने का गौरव है जिसने संसार को सहिष्णुता तथा सभी धर्मों को मान्यता प्रदान करने की शिक्षा दी है। हम सब धर्मों के प्रति केवल सहिष्णुता पर विश्वास नहीं करते वरन् समस्त धर्मों को सच्चा मानकर ग्रहण करते हैं। मुझे आपसे यह निवेदन करते हुए हर्ष होता है कि मैं ऐसे धर्म का अनुयायी हूँ जिसका विश्व की अन्य भाषाओं में कोई पर्यायवाची नहीं है। मुझे ऐसे देश के व्यक्ति होने का अभिमान है जिसने इस पृथ्वी की समस्त पीड़ित और शरणागत जातियों तथा विभिन्न धर्मों के वहिष्कृत मतावलम्बियों को आश्रय दिया है।” (यादव, भागीरथ प्रसाद 2016)

9. निष्कर्ष

पंडित दीनदयाल उपाध्याय की शैक्षिक अवधारणाओं की समकालीन भारत के संदर्भ में महत्वपूर्ण प्रासंगिकता और प्रयोज्यता है। शिक्षा का उनका दर्शन, एकात्म मानवतावाद के सिद्धांतों में निहित है, जो व्यक्तियों के समग्र विकास और आधुनिक शिक्षा के साथ पारंपरिक मूल्यों के एकीकरण में मूल्यवान अंतर्दृष्टि प्रदान करता है। इस पूरी परीक्षा के दौरान, यह स्पष्ट हो गया कि उपाध्याय का व्यक्तियों के समग्र विकास पर जोर छात्रों के शारीरिक,

बौद्धिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक पहलुओं के पोषण के महत्व की बढ़ती मान्यता के साथ मेल खाता है। भारत में समकालीन शैक्षिक संवाद एक संतुलित दृष्टिकोण की आवश्यकता को स्वीकार करता है जो मात्र अकादमिक उपलब्धि से परे है। शिक्षा में पारंपरिक भारतीय मूल्यों के एकीकरण के लिए उपाध्याय का आह्वान सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करने और शिक्षार्थियों के बीच पहचान और गर्व की भावना को बढ़ावा देने की चिंताओं को संबोधित करता है। तेजी से बदलती दुनिया में, जहां वैश्वीकरण और तकनीकी प्रगति शैक्षिक प्रथाओं को प्रभावित कर रही है, पारंपरिक ज्ञान को पुनर्जीवित करने और इसे पाठ्यक्रम में शामिल करने पर नए सिरे से ध्यान केंद्रित किया जा रहा है।

10. संदर्भ

1. नारायण, नरसिंह। (2017) "नेहरूज ह्यूमैनिज्म।" सेक्युलर डेमोक्रेसी, 22 नंबर 5 18-20।
2. निगम, आर.एल. (2016) "वसुधैव कुटुम्बकम्।" कट्टरपंथी मानवतावादी, 4 संख्या 10 7-9।
3. नक्रमा, क्वाने। (2015) "द इम्पैक्ट टैट लास्ट्स।" सेक्युलर डेमोक्रेसी, 22 नंबर 5 13-21।
4. पामर, नॉर्मन डी. (2017) "इंडियन एंड वेस्टर्न पॉलिटिकल थॉट: कोलेसेन्स ऑर क्लैश।" द अमेरिकन पॉलिटिकल साइंस रिव्यू, 49 747-761।
5. राजू, ए.एस. राम आ। (2017) "मानववाद एक संक्षिप्त अध्ययन।" त्रिवेणी, 41 - नंबर 1 61-67।
6. वाजपेयी, पुरुषोत्तम चंद्र (2015) कबीर और जायसी का मूलांकन। वाराणसी हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय।
7. वाष्णैय, आर.एल. और शशि प्रभा श्री अरबिंदो (2018) द पोएट। दिल्ली उप प्रकाशन।
8. वर्मा, रामकुमार. (2018) कबीर बायोग्राफी एंड फिलॉसफी। नई दिल्ली: प्रिंट्स इंडिया, 1977।
9. वूडविल शैलोट और पार्टिन बी हैरी। (2016) 'कबीर और आंतरिक धर्म', धर्मों का इतिहास, वॉल्यूम। 3 नंबर 2।
10. वेणुगोपाल सी. एन. (2017) 'रिफॉर्मिस्ट सेक्ट्स एंड द सोशियोलॉजी ऑफ रिलीजन इन इंडिया', सोशियोलॉजिकल एनालिसिस, वॉल्यूम। 51 77-88।
11. विन और एम. कैलेवर्ट और डाइटर ताइलिउ, एड। (2019) दक्षिण एशिया में भक्ति साहित्य, वर्तमान अनुसंधान 1997-2000 दिल्ली: मनोहर।
12. यादव, भागीरथ प्रसाद (2016) कबीर काव्य के स्रोत। पटना: अनुपम प्रकाशन।

Corresponding Author

Chandana Banerjee*

Research Scholar, Kalinga University